कल किसने देखा ळे

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

काल का अखण्ड प्रवाह चल रहा है। मानव अपनी सुविधा के अनुसार काल को भूत, वर्तमान और भविष्य में विभाजित कर लिया है। कल कभी आता है या नहीं इसको कोई नहीं जानता। केवल वर्तमान ही मानव के साथ रहता है। वर्तमान ही मानव के विकास के लिए है। वर्तमान बीतकर भूत हो जाता है, भविष्य कभी आता ही नहीं। कबीरदासजी ने कहा है–

काल करै सो आज कर आज करै सो अब।

पल में परलय होयेगी, बहुरि करोगे कब?

अर्थात् कोई भी कार्य कल पर नहीं छोड़ना चाहिए। वर्तमान का उपयोग करना चाहिए। कौन जानता है कल श्वांस आयेगी या नहीं। जब आयुष्य कर्म समाप्त हो जाता है तो शरीर जड़ हो जाता है। आत्मा के शरीर से निकल जाने पर शरीर नष्ट हो जाता है। शरीर नश्वर और आत्मा शाश्वत् है।

धन, स्त्री, पशु, पुत्र, पुत्री, महल, पृथ्वी, हाथी, खजाना और भांति–भांति की विभूतियां और तो क्या, संसार का समस्त धन तथा भोग सामग्रियां इस क्षणभंगुर मनुष्य को क्या सुख दे सकती हैं। वे स्वयं ही क्षणभंगुर हैं। जैसे इस लोक की सम्पत्ति प्रत्यक्ष ही नाशवान है, वैसे ही यज्ञों से प्राप्त होने वाले स्वर्गादि लोक भी नाशवान और आपेक्षिक–एक दूसरे से छोटे–बड़े, नीचे–ऊँचे हैं। इसलिये वे भी निर्दोष नहीं है। निर्दोष हैं केवल परमात्मा। न किसी ने उनमें दोष देखा है और न सुना है, अतः परमात्मा की प्राप्ति के लिये अनन्य भक्ति से उन्हीं परमेश्वर का भजन करना चाहिये।

इसके सिवा अपने को बड़ा विद्वान मानने वाला पुरुष इस लोक में जिस उद्देश्य से बार–बार बहुत से कर्म करता है, उस उद्देश्य की प्राप्ति तो दूर रही–उलटा उसे उसके विपरीत ही फल

मिलता है और निस्सन्देह मिलता है। कर्म में प्रवृत्त होने के दो ही उद्देश्य होते हैं– सुख पाना और दुःख से छूटना। परन्तु जो पहले कामना न होने के कारण सुख में निमग्न रहता था, उसे ही अब कामना के कारण यहां सदा सर्वदा दुःख ही भोगना पड़ता है। मनुष्य इस लोक में सकाम कर्मों के द्वारा जिस शरीर के लिये भोग प्राप्त करना चाहता है, वह शरीर ही पराया–स्यार–कुत्तों का भोजन और नाशवान है। कभी वह मिल जाता है तो कभी बिछुड़ जाता है। जब शरीर की यह दशा है– तब इससे अलग रहने वाले पुत्र, स्त्री, महल, धन, सम्पत्ति, राज्य खजाने, हाथी, घोड़े, मन्त्री, नौकर–चाकर, गुरुजन और दूसरे अपने कहलाने वालों की तो बात ही क्या है। ये तुच्छ विषय शरीर के साथ ही नष्ट हो जाते हैं।

ये जान तो पड़ते हैं पुरुषार्थ के समान, परन्तु हैं वास्तव में अनर्थरूप ही। आत्मा स्वयं ही अनन्त आनन्द का महान समुद्र है। उसके लिये इन वस्तुओं की क्या आवश्यकता है? तनिक विचार तो करो– जो जीव गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यनत सभी अवस्थाओं में अपने कर्मों के अधीन होकर क्लेश–ही क्लेश भोगता है, उसका इस संसार में स्वार्थ ही क्या है। यह जीव सूक्ष्म शरीर को ही अपना आत्मा मानकर उसके द्वारा अनेकों प्रकार के कर्म करता है और कर्मों के कारण ही फिर शरीर ग्रहण करता है।

इस प्रकार कर्म से शरीर और शरीर से कर्म की परम्परा चल पड़ती है। और ऐसा होता है अविवेक के कारण। इसलिये निष्काम भाव से निष्क्रिय आत्मस्वरूप भगवान श्रीहरि का भजन करना चाहिये। अर्थ, धर्म और काम सब उन्हीं के आश्रित हैं, बिना उनकी इच्छा के नहीं मिल सकते। भगवान श्रीहरि समस्त प्राणियों के ईश्वर, आत्मा और परम प्रियतम हैं। वे अपने ही बनाये हुए पंचभूत और सूक्ष्मभूत आदि के द्वारा निर्मित शरीरों में जीव के नाम से कहे जाते हैं। देवता, दैत्य, मनुष्य, यक्ष अथवा गन्धर्व–कोई भी क्यों न हो जो भगवान के चरण कमलों का सेवन करता है, वह हमारे ही समान कल्याण का भाजन होता है।

भगवान को प्रसन्नकरने के लिये ब्राह्मण, देवता या ऋषि होना, सदाचार और विविध ज्ञानों से सम्पन्न होना तथा दान, तप, यज्ञ, शारीरिक और मानसिक शौच और बड़े–बड़े व्रतों का अनुष्ठान पर्याप्त नहीं है। भगवान केवल निष्काम प्रेम भक्ति से ही प्रसन्न होते हैं और सब तो

विडम्बना मात्र है। इसलिये समस्त प्राणियों को अपने समान ही समझकर सर्वत्र विराजमान, सर्वात्मा, सर्वशक्तिमान भगवान की भक्ति करो।

भगवान की भक्ति के प्रभाव से दैत्य, यक्ष, राक्षस, स्त्रियां, शुद्र, गोपालक अहीर, पक्षी, मृग और बहुत से पापी जीव भी भगवदभव को प्राप्त हो गये हैं। इस संसार में या मनुष्य शरीर में जीव का सबसे बड़ा स्वार्थ अर्थात एकमात्र परमार्थ इतना ही है कि वह भगवान की अनन्य भक्ति प्राप्त करें। उस भक्ति का स्वरूप है सर्वदा, सर्वत्र सब वस्तुओं में भगवान का दर्शन। जो व्यक्ति अपने समय का सदुपयोग आत्मदर्शन में और परमार्थ में लगाता है वह अपने समय का सदुपयोग करता है।